Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. IX, Issue No. XVIII, April-2015, ISSN 2230-7540

REVIEW ARTICLE

भारतीय साहित्य में स्त्री अस्मिता की तलाश

AN INTERNATIONALLY INDEXED PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. IX, Issue No. XVIII, April-2015, ISSN 2230-7540

भारतीय साहित्य में स्त्री अस्मिता की तलाश

Dr. Rekha Rani Zood

Assistant Professor (Hindi), Babu Anant Ram Janta College of Education, Kaul (Kaithal)

---------------------------------x---------------------------------

नारी सम्पूर्ण दुनिया का आधा भाग है। वह एक ऐसी आधी दुनिया है, जो प्रत्येक कदम पर पुरुष द्वारा नियंत्रित और अनुशासित होती रही है।स्त्री सम्पूर्णता का दूसरा पहलू है। वह न केवल पुरुष को पूर्णता प्रदान करती है, बल्कि दुनिया का आधा प्रतिनिधित्व भी उसके हाथों में है। भारतीय समाज में नारी के विविध रूप देखने को मिलते हैं। परिवार में रहती हुई नारी माँ, बेटी, बहन, पत्नी, सखी, प्रेयसी आदि महत्त्वपूर्ण रूपों के अतिरिक्त बहू, ननद, भाभी, सास इत्यादि रूपों में भी अपना कर्त्तव्य निभाती है। समाज में शायद ही ऐसा कोई प्राणी होगा जो नारी के किसी–न–किसी रूप से प्रभावित न हो। स्त्री विमर्श को लेकर आज बहुत सवाल उठाये जा रहे हैं। जिनकी केन्द्रीय समस्या है– 'पितृसत्तात्मक समाज की विसंगतियों या पुरूष वर्चस्व के संस्कारों की विडम्बनाओं से कैसे जूझा जाये? आरम्भ इस सत्य की स्वीकृति से की जा सकती है कि स्त्री ने अपनी अस्मिता से आधी दुनिया की अस्मिता को संम्भव बनाया, लेकिन हमारे सभ्य समाजों का इतिहास यह बताता है कि सभी को अपनी आवाज का हक पूरी तरह से नही दिया गया। स्त्री चिन्तन अथवा सशक्तीकरण से हमारा तात्पर्य है कि यह कोई संघर्ष का मुद्दा नहीं है।

स्त्री विमर्श–स्त्री अस्मिता और स्त्री चेतना का ही दूसरा रूप हैं इस दृष्टि से गहन धर्म वाला यह शब्द मुक्ति या स्त्री स्वातंत्र्य के साथ–साथ स्त्री की अस्मिता, चेतना एवं स्वाभिमान को भी अपने में समेट लेता है। स्त्री का अपने शरीर या जीवन जीने के तरीके के बारे में अपने को कर्ता बनाने का प्रयास या जीवन के स्वस्थ पक्ष को ग्रहणकर आत्म निर्णय की ताकत हासिल करना स्त्री विमर्श के अन्तर्गत आता है। स्त्री विमर्श को लेकर आज बहुत सवाल उठाये जा रहे हैं। जिनकी केन्द्रीय समस्या है– 'पितृसत्तात्मक समाज की विसंगतियों या पुरूष वर्चस्व के संस्कारों की विडम्बनाओं से कैसे जूझा जाये? आरम्भ इस सत्य की स्वीकृति से की जा सकती है कि स्त्री ने अपनी अस्मिता से आधी दुनिया की अस्मिता को संम्भव बनाया, लेकिन हमारे सभ्य समाजों का इतिहास यह बताता है कि सभी को अपनी आवाज का हक पूरी तरह से नही दिया गया। स्त्री चिन्तन अथवा सशक्तीकरण से हमारा तात्पर्य है कि यह कोई संघर्ष का मुद्दा नहीं है।

स्त्री और पुरूष के बीच का यह संघर्ष दो वर्गों, दो नस्लों, दो जातियों, दो दलों, दो राष्ट्रों के बीच संघर्ष से तुलनीय नही, सम्पन्न और विपन्न, ऊंच और नींच, शासक और शासित, गोरे और काले के बीच जो जंग छिड़ी है, उनमें प्रतिपक्षियों के हितनिकाय अलग–अलग है। इसीलिए हार और जीत अलग ही मायने रखती है। '''''' परिवार यह अच्छा है कि बुरा, –मै नही जानता, –पर मानवता की इतनी लम्बी यात्रा के बावजूद तीसरी दुनिया के देशों में सामाजिक व्यवस्था की मूल इकाई उनका परिवार ही है। जिसमें कम से कम उनके बच्चे तो शामिल हैं ही –कुल मिलाकर यह एक ऐसी लड़ाई है जिसमें सत्ता का हस्तान्तरण उतना महत्वपूर्ण मुद्दा नहीं जितना दृष्टियों और व्यक्तियों का शान्तिपूर्ण सह–अस्तित्व और सामंजस्य। स्त्री लेखन धनी महिलाओं का कोरा वाग्विलास और न्यूज में बने रहने की उनकी साजिश नही हैं ग्रासरूट स्तर तक इसका विस्तार है और हर वर्ग, हर नश्ल सार्वभौम भगिनीवाद यूनिवर्सल सिस्टर हुड का मूल मंत्र पहचानने में सफल भी हुआ है, क्योंकि नस्ल या देश कोई भी रहा हो, स्त्रियों की भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक, नैतिक, भौतिक और अस्मिता सम्बन्धी समस्यायें प्रायः एक सी हैं। स्त्रियों का यह सखीभाव ही सामान्य संस्कारों की उस उदात्त सांझेदारी का नाम है जिसे स्त्री अस्मिता कहते हैं। समकालीन स्त्री लेखन में जिन प्रश्नों को उठाया गया है उनमें स्त्रियों की ''आर्थिक आत्मनिर्भरता'' प्रमुख है। ''सिमोन द बोउवा'' ने पहली बार इस बात की घोषणा की कि ''आर्थिक स्वतंत्रता के अभाव में स्त्री की स्वतंत्रता सिर्फ अमूर्त और सैद्धान्तिक रह जाती है। आर्थिक आत्मनिर्भरता स्त्री स्वातंत्र्य का दरवाजा है।'' प्रभा खेतान के उपन्यास ''छिन्नमस्ता'' और ''पीली आंधी'' की स्त्रियां आर्थिक स्वायत्तता के माध्यम से पुरूष समाज में अपना 'स्पेस' बनाती है। पतझड़ की आवाजेंनिरूपमा सेवती की अनुभा छोटी उम्र से ही टाइप सीखकर घर परिवार की सहायता करने के लिए विवश है। ''उसके उगते बढ़ते शरीर व मन की भावनाएं उसका रूप .... इसका मूलयांकन उसके जीवन को यों ही फीज्ड ठण्डा बना देती है। ......पदोन्नति प्राप्त करने के लिए इसे मांगे जाने वाला मूल्य उसकी मानवता व उसकी अस्मिता को तोड़ देने वाला है।'' मैत्रेयी पुष्पा की मंदाकिनी इदन्मम् शिक्षा और आर्थिक स्वालम्बन के पारम्परिक ढांचे से होकर ही अपनी वास्तविक जगह बनाती है। उसके भीतर आजादी रूमानी ख्वाब के बजाय आत्मसंघर्ष से आती है। ग्रामीण परिवेश उसके इस विकास में सहायक हैं, जहां वह सारे गांव की लड़की है और यही ग्रामीण परिवेश उसे ताकत भी देता है। स्वतंत्र सत्ता के साथ आज स्त्री अपनी अस्मिता को तलाशती हुई नये संस्कारों के नये अर्थ खोलती है। प्रभा खेतान का इस संदर्भ में कहना है कि ''आज हमें सोचना है कि हम अपनी अस्मिता को पुनः कैसे परिभाषित करें? कैसे अपनी और अपने समाज की रूपरेखा तैयार करें? हमारे सामने पहले से कोई संयुक्त आदर्श मौजूद नही है। अतः ''आज स्त्री का मसीहा स्त्री खुद है।'' प्रभा खेतान के उपर्युक्त पंक्ति के संदर्भ में महादेवी वर्मा स्त्री होने के नाते कराह उठी ''विस्तृत नभ का कोई कोना। मेरा न कभी अपना होना।'' उन्होने तब जो पीड़ा झेली थी, वह व्यक्त की थी। महादेवी जी की चाहत तो एक

www.ignited.in

कोने तक सीमित थी पर आज की स्त्री उतने से ही संतुष्ट न होकर अपने लिए भूरपूर स्पेस की मांग करती है–

''मुझे अनन्त दिगन्त चाहिए, छत का खुला आसमान नहीं,

आसमान की खुली छत चाहिए, मुझे अनन्त का आसमान चाहिए''

''श्रृंखला की कड़िया'' में महादेवी जी लिखती हैं– ''विवाह योग्य कन्या को बिकने के लिए खड़े हुए पशु की तरह देखना कुछ गर्व की वस्तु नही। .... क्या इन्हीं पुरूषार्थ और पराअमहीन पतियों से वह सौभाग्यवती बनेगी .... और लाख टके का प्रश्न यह कि आखिर व्यंजन की तरह कब तक परोसी जाती रहेगीं हम औरतें?''

हंस विशेषांक 2000 जनवरी–फरवरी में अर्चना वर्मा कहती हैं– ''मातृत्व स्त्री को प्राकृतिक रूप से उपलब्ध सार्थकता का एक सहज अवसर है वह स्वाधीनता के लिए न केवल कैरियर में बाधक है अनावश्यक सिरदर्द बल्कि पराधीनता की कुंजी भी है। . ... पढ़ लिखकर हम क्या इसीलिए रह गये हैं'' इसलिए का मतलब घर संभालने के लिए या फिर बच्चों की आयागिरी के लिए या फिर पति का बिस्तर गर्म करने के लिए।'' आज सचमुच प्रेम की अवधारणा का अवमूल्यन हो गया है। इसलिए दाम्पत्य सम्बन्धों में सम्बन्ध विच्छेद की स्थिति आ जाती है। विवाद को जन्मजन्मातरों का सम्बन्ध मानने वाली मानसिकता खण्डित हो गयी। विवाद एक समझौता होकर रह गया है। जिसे जब चाहे तोड़ा जा सकता है। स्त्री अस्मिता विमर्श रचती यह स्त्री ऐसे पति के अस्तित्व को खारिज करती है जहां स्त्री के व्यक्तित्व का कोई स्थान न हो 'विजन' उपन्यास की नेहा और आया दो भिन्न जीवन मूल्यों का प्रतीक है। इसी प्रकार उसके हिस्से की धूप मृदुला गर्ग की ममता और ''उम्र एक गलियारे की'' नासिरा शर्मा की सुनन्दा पर–पुरूष की ओर झुकती है, पर–पुरूष से बेहिचक और बिना पाप बोध ग्रस्त हुए अस्थायी और स्थायी यौन सम्बन्धों की बहुलता को देखकर इस नतीजे पर पहुचना कठिन नही है कि नगर जीवन में नैतिकता के पुराने प्रतिमान ध्वस्त हो रहे है। सतीत्व, पतित्व और अत्याधिक प्रेम, जैसे भारतीय मूल्यों को हिलाकर 'सेक्स' का तूफान नगर और महानगर जीवन पर छा जाना चाहता है। फिर प्रश्न उठता है कि स्त्री विमर्श से तात्पर्य क्या है? स्त्री विमर्श देहवादी विमर्श है। देह के साथ देह का समझौता कर पायदान पर चढ़ी स्त्री को देह में और देह को हथियार में बदल लेने की ताकत दी है।

हंस विशेषांक 2000 में अर्चना वर्मा जी लिखती हैं– ''जब तक स्त्री के पास देह है और संसार के पास पुरूष तब तक स्त्री को चिन्ता की क्या जरूरत? जरूरत है तो देह को पुरूष के स्वामित्व से मुक्त करके अपने अधिकार में लेने की क्योंकि यौन शुचिता, सतीत्व जैसे मूल्य स्त्री के सम्मान का नही पुरूष के अहंकार की दीनता और असुरक्षा का पैमाना है, पितृसत्ता के मूल्य है और स्त्री की बेड़िया।'' आज का स्त्रीलेखन अन्तर्विरोधों की ऐसी कशमकश के दौर से गुजर रहा है? –स्त्री देह पर उसका अधिकार हो, –यह बात तो उचित है लेकिन बड़े खतरे है इसके –आज उपभोक्तवादी संस्कृति, बाजारवादी संस्कृति जैसी निज संस्कृतियों को बढ़ावा दिया जा रहा है, भूमण्डलीकरण का अंधेरा चारों ओर से हमें घेर रहा है। –ऐसे में जो उपभोक्तावादी संस्कृति की हिमायती शक्तिया हैं। उनका हित इसी में लगता है कि सभी विमर्श को देहवादी विमर्श से रिड्यूस कर दिया जाये। लब्ध–प्रतिष्ठा लेखिका ममता कालिया जी कहती हैं कि– ''हालत यह है कि महिला लेखन का देहवादी विंग आज विचारवादी विंग को पीट चुका है। ऐसी रचनायें पढ़ने में आ रही है जिनमें लेखिका आइटम डांस की तरह रजाई प्रसंग अथवा विपरीत रति प्रसंग का वर्णन अनिवार्य रूप से डाल रही है। .... इस समय समाज की विराट समीक्षा और सामान्य जीवन का सुर संगीत साधने के बजाये समकालीन महिला लेखन सीमित सरोकारों में उलझता दिखाई देता है।'' मैत्रेयी पुष्पा– ''देह के भोग'' को स्त्री मुक्ति का साधन मानती है। उनकी नायिकाओं का इस संदर्भ में आदर्श वाक्य है– ''हमारा मन जो कहता है .....

हमारे पॉव जहां ले जाते हैं ....मनुष्य होने के नाते हमारे कुविचार और कुचेष्टायें नही जन्मसिद्ध अधिकार है। ''नया ज्ञानोदय'' बेवफाई सुपर विशेषांक–2 के साक्षात्कार में कुलपति महात्मा गाधी मुक्त हिन्दी विश्वविद्यालय वर्धा विभूति नारायण राय की देहवादी स्त्री विमर्श के वक्तव्य से हिन्दी जगत में भूचाल आ गया– वक्तव्य देखिए– ''पिछले वर्षों से हमारो यहां जो स्त्री विमर्श हुआ है वह मुख्य रूप से शरीर केन्द्रित है। यह भी कह सकते है कि यह विमर्श बेवफाई के विराट उत्सव की तरह है। लेखिकाओं में होड़ लगी है यह साबित करने के लिए कि उनसे बड़ी छिनाल कोई नही है।'' ......दरअसल इससे स्त्री मुक्ति के बड़े मुद्दे पीछे चले गये हैं।'' माननीय राय साहब जिस मानसिक पीड़ा से गुजरे हों वे उससे उन्हें स्वानुभूति बनाम सहानुभूति का एहसास हुआ ही होगा। महिला लेखिकाओं में फायर ब्राण्ड और लेखनी का ए0के0 47 की तरह इस्तेमाल करने वाली मनीषा लिखती है कि– ''भारत में चालीस साल के पर लगभग नौ करोड़ आदमी स्वीकृत रूप से नपुंसक हैं .... पर सामाजिक–पारिवारिक दबावों में उनकी पत्नियां चूं तक नही कर पाती ...... और अगर स्त्री बच्चा नहीं जन पाती तो भी उसकी शारीरिक संरचना पुरूष को भरपूर यौनानन्द देने के काबिल तो रहती ही है।'' आज स्त्री विमर्श ने एक नया मुकाम और नयी शब्दावली तैयार कर ली है, सर्वत्र सामाजिक बदलाव आ रहा है। अनुभव और अभिव्यक्ति के द्वारा स्त्री अस्मिता का नया अध्याय तलाशा जा सकेगा। मुझे लगता है कि हर स्त्री के भीतर कहीं न कहीं एक चिनगारी रहती है .... हर देश ओर हर युग की स्त्री में। शायद सदियों से सहा गया अपमान पूँजीभूत हो एक सोची चिनगारी के रूप में प्रत्येक स्त्री में रहता है। भारतीय स्त्री की कौन सी तस्वीर सही है– सहने वाली, विद्रोह करने वाली, या कि इनके बीच की वह जो अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष कर रही है। सही तो शायद तीनों हैं क्योंकि तीनों वर्तमान की सच्चाई है– पुरूष होने के नाते .... मुझे वह तस्वीर प्रिय है जहां स्त्री पुरूष से संघर्ष की स्थिति में खड़े होने के बजाय पुरूष के साथ एक आत्मिक गुम्फन में खड़ी है।

संदर्भ :

1. महादेवी वर्मा : 'श्रृंखला की कड़िया''।
2. सिमोन द बोउवा– ''सेकेण्ड सेक्स'' हिन्दी अनुवाद।
3. मैत्रेयी पुष्पा– ''इदन्नमम''।
4. मैत्रेयी पुष्पा– 'कस्तूरी कुण्डल वसै''।
5. माध्यम– अप्रैल–जून 2005 हिन्दी सा0 सम्मेलन
6. हंस– जनवरी–फरवरी, 2004.
7. स्त्री विमर्श विविध पहलू– लोक भारती प्रकाशन।
8. बहुवचन– जुलाई–सितम्बर, 2009.

9. नया ज्ञानोदय– बेवफाई सुपर विशेषांक–2.

10. हंस– अगस्त, 2010.